चरण लाल साहू

बनाम

श्री नीलम संजीव रेड्डि

(Charan Lal Sahu

Vs.

Shri Neelam Sanjeeva Reddy)

(15 फरवरी, 1978)

(मुख्य न्यायाधिपति, एम० एच०. बेग, न्यायाधिपति वाई० वी० चन्द्रचूड़ पी० एन० भगवती, वी० आर० कृष्ण अय्यर, जसवन्त सिंह, वी० डी० तुलजापुरकर और डी० ए० देसाई)

राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 14—(सपठित उच्चतम न्यायालय नियमों का भाग 3, आदेश 23)—धारा 14 के अधीन राष्ट्रपति के निर्वाचन को चुनौती देते हुए निर्वाचन अर्जी का फाइल किया जाना—अर्जीदार क्योंकि अभ्यर्थी नहीं है इसलिए उसे अर्जी को कायम रखने के लिए सुने जाने का कोई अधिकार नहीं है।

चरण लाल साहू ने जुलाई, 1977 में हुए राष्ट्रपतीय निर्वाचन में भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डि के निर्वाचन को चुनौती देते हुए उच्चतम न्यायालय में निर्वाचन अर्जी फाइल की। निर्वाचन अर्जी खारिज करते हुए—

अभिनिर्धारित—राष्ट्रपतीय निर्वाचन को प्रश्नगत करने की प्रक्रिया अथवा रीति अधिकथित की जा चुकी है, अतः अर्जीदार को उस प्रक्रिया के भीतर आ जाना चाहिए जिससे कि उसे राष्ट्रपतीय निर्वाचन पर आक्षेप करने का अधिकार मिल सके और इस अर्जी को कायम रखने के योग्य हो सके। यदि वह अपनी अर्जी में ही अपने द्वारा किए गए प्राख्यानों के आधार पर न तो अभ्यर्थी है न ही होने का दावा कर सकता है, तो उसे भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डि के निर्वाचन

को प्रश्नगत करने का अधिकार नहीं होगा। इस न्यायालय के आदेश 39 के नियम 2 और 5 के साथ पठित अधिनियम की धारा 14(1), 14(2), 14(3) और 14–क(1) के उपबन्ध का प्रभाव यह है कि अर्जी वर्जित है क्योंकि अर्जीदार के पास उसे कायम रखने के लिए अपेक्षित सुने जाने का अधिकार नहीं है। (पैरा 12)

राजस्थान राज्य बनाम भारत संघ में इस न्यायालय ने प्रारम्भिक प्रश्न पर विवाद्यक विरचित किए बिना संविधान के अनुच्छेद 131 के अधीन इस न्यायालय में फाइल किए गए वाद खारिज कर दिए थे। उस मामले में यह संकेत किया गया था कि उन मामलों में तकनीकी रूप से अधिक उचित आदेश पारित करने का मतलब इस न्यायालय के नियमों के आदेश 23, नियम 6 के अधीन आरम्भ में ही वादपत्रों को नामंजूर करना होगा। (पैरा 14)

लेकिन इस मामले में यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अर्जी अधिनियम की धारा 5–ख और 5–ग तथा धारा 14–क और अधिनियम की धारा 14(3) में वर्णित भाग 3 के अधीन विरचित इस न्यायालय के नियमों के आदेश 39 नियम 2 और 5 के साथ पठित धारा 14(1) और (3) के उपबन्धों द्वारा वर्जित है। (पैरा 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1978]	(1978) 1 एस० सी० आर० 1 = [1977] 4 उम० नि० प० 1107 : **राजस्थान राज्य** बनाम **भारत संघ** (The State of Rajasthan *Vs.* The Union of India);	14
[1976]	(1976) 2 एस० सी० आर० 347 = [1976] 1 उम० नि० प० 1 : **श्रीमती इन्दिरा नेहरू गांधी** बनाम **राज नारायण** (Smt. Indira Nehru Gandhi *Vs.* Raj Narain);	11
[1936]	ए० आई० आर० 1936 पी०सी० 252 (2) : **नजीर अहमद** बनाम **एम्परर** (Nazir Ahmed *Vs.* The Emperor).	17

1978(2) eILR(PAT) SC 226

आरिम्भक अधिकारिता : 1977 की निर्वाचन अर्जी संख्या 1.

अर्जीदार की ओर से	श्री चरण लाल साहू (स्वयं)
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री पी० राम रेड्डी, ओ० सी० माथुर, जे०बी० दादाचांजी, सी० एस० आर० राव और ए० वी० बी० नायर
महान्यायवादी और रिटर्निग अधिकारी की ओर से	श्री एस० वी० गुप्ते, महान्यायवादी श्री आर० एन० सचदे

अभिलेख अधिवक्ता

अर्जीदार की ओर से	श्री चरण लाल साहू (स्वयं)
प्रत्यर्थी की ओर से	मैसर्स जे० बी० दादाचांजी एण्ड कम्पनी
महान्यायवादी और रिटर्निग अधिकारी की ओर से	श्री आर० एन० सचदे

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायाधिपति एम० एच० बेग ने दिया।

मुख्य न्यायाधिपति बेग—

यह अर्जी राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति निर्वाचन, अधिनियम, 1952 (जिसे इसमें इसके पश्चात् अधिनियम कहा गया है) की धारा 14 के अधीन फाइल की गई है जिसमें 19 जुलाई, 1977 को हुए राष्ट्रपतीय निर्वाचन में भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डि के निर्वाचन को चुनौती दी गई है। अधिनियम की धारा 14 और 14–क का सुसंगत भाग निम्नलिखित रूप में है—

"14 (1) कोई भी निर्वाचन उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट प्राधिकरण को पेश की गई निर्वाचन अर्जी द्वारा ही प्रश्नगत किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(2) उच्चतम न्यायालय निर्वाचन अर्जी का विचारण करने की अधिकारिता रखने वाला प्राधिकरण होगा।

(3) हर निर्वाचन अर्जी ऐसे प्राधिकरण को उस भाग के उपबन्धों और उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 145 के अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार पेश की जाएगी।

14. क (1) निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली अर्जी धारा 18 की उपधारा (1) में और धारा 19 में निर्दिष्ट आधारों में से एक या अधिक आधारों पर ऐसे निर्वाचन के किसी अभ्यर्थी द्वारा, या--

(i) राष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में बीस या अधिक निर्वाचकों द्वारा संयुक्त अर्जीदारों के रूप में"

× × × × ×

उच्चतम न्यायालय में पेश की जा सकेगी।

2. इस न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों में से, भाग 7 आदेश 39 में अधिनियम की धारा 14(3) में उल्लिखित भाग 3 के अधीन दी गई निर्वाचन अर्जियों से सम्बन्धित नियम अन्तर्विष्ट हैं। आदेश 39 के नियम 2 में यह अधिकथित किया गया है--

*"2. निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाला कोई आवेदन इस आदेश के उपबन्धों के अनुसार दी गई और उपस्थित की गई अर्जी के द्वारा ही किया जाएगा।"

आदेश 39 के नियम 5 में निम्नलिखित उपबन्ध किया गया है--

**"5. अर्जी में अधिनियम के अधीन न्यायालय में अर्जी देने के लिए अर्जीदार के अधिकार का कथन होगा और उसके द्वारा मांगे गए अनुतोषों के समर्थन में उसके द्वारा अवलम्बित तथ्य और आधार संक्षेप में उपवर्णित होंगे।"

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है--

"2. An application calling in question an election shall only be by a petition made and presented in accordance with the provisions of this Order"

**"5. The Petition shall state the right of the petitioner under the Act to petition the Court and briefly set forth the facts and ground relied on by him to sustain the reliefs claimed by him".

आदेश 39 के नियम 34 में निम्नलिखित कहा गया है--

*"34. इस आदेश या किसी विशेष आदेश या न्यायालय के निदेशों के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, किसी निर्वाचन अर्जी की प्रक्रिया में यथासम्भव न्यायालय की आरम्भिक अधिकारिता के प्रयोग में उसके समक्ष कार्यवाहियों की प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा।"

3. अतः इस न्यायालय के नियमों के भाग 3 में, जिसमें वादपत्रों द्वारा वादों के संस्थित किए जाने से सम्बन्धित आदेश 23 भी सम्मिलित हैं अन्तर्विष्ट प्रक्रिया "वादपत्र" के लिए "अर्जी" शब्द पढ़ने के पश्चात् निर्वाचन अर्जियों द्वारा प्रारम्भ की गई कार्यवाहियों को लागू होती है। इन नियमों में नियम 6 है जिसमें यह उपबन्धित है कि यह न्यायालय, रजिस्ट्रार के समक्ष वादपत्र के प्रस्तुत किए जाने और उसे संख्यांकित किए जाने के पश्चात्, वादपत्र को उस दशा में नामंजूर कर देगा "जब उसमें वाद हेतुक प्रकट न किया गया हो "अथवा जब" वादपत्र में किए गए कथन से वाद किसी विधि द्वारा वर्जित दिखाई देता हो"। न्यायालय के लिए यह आबद्धकर है कि वह उसे तुरन्त नामंजूर कर दे और यदि यह दर्शित किया गया हो कि विधि के उपबन्धों से कार्यवाहियां वर्जित हैं तो वादपत्र या अर्जी पर अधिक समय नष्ट न करे। वस्तुतः ऐसे मामले में विरोधी पक्षकार या पक्षकारों को सूचना देना भी आवश्यक नहीं है। किन्तु जहां अर्जीकार की अर्जी या वादपत्र नामंजूर कर दिया जाता है वहां आदेश 23, नियम 7 के अधीन यह अपेक्षित है कि "न्यायालय उस प्रभाव का आदेश अभिलिखित करेगा जिसमें उस आदेश के दिए जाने के कारण भी होंगे।"

4. आदेश 24 के अधीन समन जारी किए जाने और तामील किए जाने तथा आदेश 25 के अधीन लिखित कथन के फाइल किए जाने के पश्चात् ही किसी मामले में विवाद्यक विरचित करने की आवश्यकता का प्रश्न उठता है। लेकिन चूंकि सूचना जारी कर दी गई थी और श्री

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"34. Subject to the provisions of this order or any special order or directions of the Court, the procedure on an election petition shall follow, as nearly as may be, the procedure in proceedings before the Court in the exercise of its original jurisdiction."

नीलम संजीव रेड्डि ने इस मामले में जिसमें निर्वाचन अर्जी के लाने के बारे में प्रारम्भिक आक्षेप किए गए थे और अर्जीदार ने विवाद्यक विरचित किए जाने की मांग की थी, स्वयं विरोध में शपथपत्र फाइल किया था इसलिए इस न्यायालय ने इन प्रारम्भिक आक्षेपों पर विवाद्यक विरचित किए जो इस प्रकार हैं—

(1) क्या अर्जीदार को अपनी निर्वाचन अर्जी लाने के लिए सुने जाने का अधिकार है, अथवा दूसरे शब्दों में क्या वह राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति निर्वाचन अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग के उपबन्धों के अनुसार सम्यकतः नामनिर्दिष्ट अभ्यर्थी है ?

(2) क्या अर्जी चलने योग्य है ?

(3) क्या अर्जीदार अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग की विधिमान्यता को चुनौती दे सकता है ?

(4) यदि ऐसा है, तो क्या विवाद्यक संख्या 3 में वर्णित दोनों उपबन्ध विधिमान्य हैं ?

5. लेकिन यदि अर्जीदार अपने सुने जाने के अधिकार पर प्रथम विवाद्यक के प्रक्रम से आगे नहीं बढ़ सकता तो अन्य विवाद्यकों पर विचार करना व्यर्थ है। लेकिन इस मामले में ऊपर विरचित चार विवाद्यक अथवा विवाद्य प्रश्न इस प्रकार अन्तरसंसक्त हैं कि हम एक ही निर्णय और आदेश के माध्यम से उनका निपटारा करने की प्रस्थापना करते हैं जिसमें हम इस निष्कर्ष पर पहुंचने में अपने कारणों का कथन करेंगे कि यह अर्जी विधि के उपबन्धों द्वारा वर्जित है, जिससे कि इसे इस आधार पर नामंजूर कर दिया जाना चाहिए। हमारी यह भी राय है कि अर्जीदार न तो इस अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग की विधिमान्यता को चुनौती दे सकता है और न ही यह उपबन्ध किसी भी प्रकार से अविधिमान्य हैं। अर्जीदार ने 1974 में पुरःस्थापित सांविधानिक संशोधन की, जिसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद 71(1) के अधीन बनाए गए किसी अधिनियम की विधिमान्यता पर आक्षेप करने की किसी न्यायालय की अधिकारिता को वर्जित कर दिया गया था, विधिमान्यता को चुनौती दी है। सुसंगत सांविधानिक उपबन्ध और अधिनियम के उपबन्ध नीचे उपवर्णित किए गए हैं।

अनुच्छेद 54 में यह अधिकथित किया गया है—

"54. राष्ट्रपति का निर्वाचन—राष्ट्रपति का निर्वाचन एक ऐसे निर्वाचक-गण के सदस्य करेंगे जिसमें—

(क) संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य, तथा

(ख) राज्यों की विधान-सभाओं के निर्वाचित सदस्य, होंगे।

राष्ट्रपति का निर्वाचन अनुपाती प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा गूढ़ शलाका द्वारा होगा यह संविधान के अनुच्छेद गढ़ शलाका 55 में उपबन्धित है। अनुच्छेद 71 के प्रथम तीन खण्डों में निम्नलिखित अधिकथित किया गया है—

"71. राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबन्धित या संसक्त विषय—(1) इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, संसद् विधि द्वारा राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से सम्बद्ध या संसक्त किसी विषय का विनियमन कर सकेगी जिसके अन्तर्गत वे आधार भी हैं, जिन पर ऐसे निर्वाचन पर आपत्ति की जा सकेगी :

परन्तु किसी व्यक्ति के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में निर्वाचन पर इस आधार पर आपत्ति नहीं की जाएगी कि निर्वाचन करने वाले निर्वाचकगण के सदस्यों में किसी भी कारण से कोई रिक्तता वर्तमान है।

(2) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से उत्पन्न या संसक्त सब शंकाओं और विवादों की जांच और विनिश्चय ऐसे प्राधिकारी या निकाय द्वारा और ऐसी रीति से किया जाएगा जो खण्ड (1) में विनिर्दिष्ट विधि द्वारा या उसके अधीन उपबन्धित हो।

(3) खण्ड (1) में निर्दिष्ट विधि की मान्यता और ऐसी विधि के अधीन किसी प्राधिकारी या निकाय के विनिश्चय पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी।"

6. संविधान के अनुच्छेद 71(1) के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए संसद द्वारा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति निर्वाचन अधिनियम, 1952 अधिनियमित किया गया था। वे आधार, जिन पर निर्वाचन

1978(2) eILR(PAT) SC 226

को प्रश्नगत किया जा सकता है तथा उसे प्रश्नगत करने के ढंग अधिनियमन द्वारा अधिकथित किए गए हैं। अधिनियम की धारा 14-क में केवल वह रीति उपबन्धित है जिसमें राष्ट्रपति के निर्वाचन को निर्वाचन अर्जी उपस्थित करके प्रश्नगत किया जा सकता है।

7. अधिनियम की धारा 13(क) में यह कहा गया है—

> "अभ्यर्थी से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जो निर्वाचन में अभ्यर्थी के रूप में सम्यकतः नामनिर्दिष्ट हुआ है या सम्यकतः नामनिर्दिष्ट होने का दावा करता है।"

अर्जीदार ने अपने वादपत्र में यह स्वीकार किया है कि उसे अधिनियम की धारा 5-ख द्वारा, जिसमें यह अधिनियमित किया गया है कि प्रत्येक अभ्यर्थी 'या तो स्वयं या अपने प्रस्थापकों अथवा समर्थकों में से किसी के द्वारा, रिटर्निंग आफिसर को धारा 5 के अधीन जारी की गई लोक सूचना में विनिर्दिष्ट स्थान पर, विहित प्ररूप में भरा गया नामनिर्देशन पत्र परिदत्त करेगा जिस पर अभ्यर्थी के नामनिर्देशन की अनुमति देते हुए हस्ताक्षर होंगे, तथा

> (क) राष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में कम से कम दस निर्वाचकों के प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम दस निर्वाचकों के समर्थकों के रूप में भी हस्ताक्षर होंगे।"

इसके पश्चात् धारा 5-ग में यह उपबन्ध किया गया है कि—

> "किसी अभ्यर्थी को निर्वाचन के लिए तब तक सम्यकतः नामनिर्दिष्ट नहीं समझा जाएगा जब तक वह दो हजार पांच सौ रूपये की राशि निक्षिप्त नहीं करता या कराता है।"

8. अब अर्जीदार ने अपनी अर्जी में यह भी स्वीकार किया है कि उसने अधिनियम की धारा 5-ग द्वारा यथा अपेक्षित इस धन राशि का निक्षेप नहीं किया था। इस प्रकार पिटीशन या वादपत्र में की गई स्वीकृतियों के अनुसार ही अर्जीदार न तो सम्यकतः नामनिर्दिष्ट अभ्यर्थी था और न ही वह ऐसा अभ्यर्थी था जो इस प्रकार नामनिर्दिष्ट होने का दावा कर सके। अतएव, अधिनियम की धारा 5-ङ के अधीन कार्य करते हुए रिटर्निंग आफिसर द्वारा उसका नामनिर्देशन पत्र ठीक ही नामंजूर किया गया था।

9. अब अर्जीदार की दलील यह है कि संविधान के अनुच्छेद 58 में निर्वाचित किए जाने वाले अभ्यर्थी के लिए अर्हताएं अधिकथित की गई हैं जिससे कि अनुच्छेद 71(1) के अधीन बनाई गई विधि उसके विरुद्ध नहीं हो सकती जो अनुच्छेद 58 में उपबन्धित किया गया है, वह अनुच्छेद इस प्रकार है—

> "(1) कोई व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र न होगा, जब तक कि वह—
>
> (क) भारत का नागरिक न हो,
>
> (ख) पेंतीस वर्ष की आयु पूरी न कर चुका हो, तथा
>
> (ग) लोक-सभा के लिए सदस्य निर्वाचित होने की अर्हता न रखता हो।
>
> (2) कोई व्यक्ति जो भारत सरकार के अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन अथवा उक्त सरकारों में से किसी से नियंत्रित किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पद धारण किए हुए है, राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र न होगा।
>
> व्याख्या—इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिए कोई व्यक्ति कोई लाभ का पद धारण किए हुए केवल इसीलिए नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति अथवा किसी राज्य का राज्यपाल है अथवा या तो संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।"

10. हमें यह स्पष्ट दिखाई देता है कि अनुच्छेद 58 में किसी अभ्यर्थी की पात्रता के लिए केवल अर्हताएं या शर्तें उपबन्धित है। इसका किसी अभ्यर्थी के नामनिर्देशन से, जिसमें दस प्रस्थापक और दस समर्थक अपेक्षित हैं, कोई संबन्ध नहीं है। हमारा यह विचार कि भारत के राष्ट्रपति के पद जैसे उच्च पद के लिए निर्वाचन की दशा में यह शर्त अधिकथित करना पर्याप्त युक्तियुक्त है कि उस व्यक्ति के, जिसे अभ्यर्थी के रूप में निर्वाचन में लड़ने की इजाजत दी जाती है, सैकड़ों निर्वाचकों में से जो विधायक है, कम से कम दस प्रस्थापक और दस समर्थक होने चाहिए। हमारा यह विचार है कि धारा 5-ख और 5-ग की विषय वस्तु ऊपरवर्णित संविधान के अनुच्छेद 71(1) के उपबन्धों के अन्तर्गत

1978(2) eILR(PAT

पूर्णतया आ जाती है। हमारा यह भी विचार है कि इस दलील में कोई बल नहीं है कि अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग संविधान के अनुच्छेद 14 के प्रतिकूल हैं। धारा 5-ख और 5-ग में अधिकथित शर्तें उन सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेदभाव के लागू होती हैं जो राष्ट्रपतीय निर्वाचन में अभ्यर्थी होना चाहते हैं। उनमें प्रथमदृष्टया किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो गंभीर रूप से राष्ट्रपतीय निर्वाचन लड़ना चाहता है, अनुपालन की जाने वाली युक्तियुक्त शर्तें अधिरोपित की गई हैं। अतः यह उपबन्ध संविधान के अनुच्छेद 71(3) के अलावा भी विधिमान्य होगा।

11. जब संविधान के अनुच्छेद 71 (3) के सम्बन्ध में अर्जीदार को बताया गया तब उसने यह दलील दी कि वह 1974 के संशोधन द्वारा, जो अविधिमान्य था, पुरः स्थापित किया गया था। जब हमने अर्जीदार से अभिकथित अविधिमान्यता के सम्बन्ध में प्रश्न किया, तो उसने यह उत्तर दिया कि उससे संविधान के आधारभूत ढांचे का अतिक्रमण होता है और यह दलील दी कि इस न्यायालय ने संविधान के इसी प्रकार के संशोधन को **श्रीमती इन्दिरा नेहरू गांधी** बनाम **राज नारायण**[1] में अविधिमान्य बना दिया था। हमारा यह विचार है कि सांविधानिक संशोधन का निजन उपबन्धों को उस मामले में अविधिमान्य बना दिया गया था उनके बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वे संविधान के अनुच्छेद 71 (3) के समरूप हैं। **श्रीमती इन्दिरा नेहरू गांधी के मामले**[1] में इस न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 329-क (4) का मुख्यतया इस आधार पर खण्डन किया गया था कि उससे संविधान के आधारभूत ढांचे का अतिक्रमण होता है क्योंकि संसद संविधान के अनुच्छेद 368 के अधीन संशोधन की अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय के समक्ष लम्बित निर्वाचन विवादों के न्यायिक विनिश्चय की शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता था। उस मामले में इस न्यायालय ने एक ऐसे उपबंध का खण्डन किया था जिसके द्वारा इस न्यायालय के समक्ष अपीलों में लम्बित विवादों का विनिश्चय करने की उसकी अधिकारिता छीन ली गई थी क्योंकि संसद ने यथार्थतः इन विवादों का विनिश्चय करने के पश्चात्, इस न्यायालय को निदेश दिया कि वह सांविधानिक संशोधन के रूप में जो कुछ अधिकथित किया गया है उसका पालन करे। इस न्यायालय ने उस शक्ति का, जो वस्तुतः संसद में निहित केवल विधायी शक्ति थी, आश्रय लेकर किसी न्यायिक या

---

[1] (1976) 2 एम० सी० आर० 347=[1976] 1 उम० नि० प० 1.

न्यायिकवत् प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना उक्त बात को विधिमान्य मानने से इनकार कर दिया जो न्यायनिर्णयन की कोटि में आता है या जिससे न्यायनिर्णयन होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित संविधान का आधारभूत ढांचा अनुच्छेद 329-क (4) द्वारा बुरी तरह से हिल गया था और इसलिए उसे शून्य घोषित किया गया था। हमारे समक्ष जो मामला है उसमें संविधान का आक्षेपित संशोधन केवल उस विधि के प्रति निर्देश करता है जिसके द्वारा संसद् राष्ट्रपतीय निर्वाचन से सम्बन्धित विषयों का, जिसके अन्तर्गत ऐसे निर्वाचन से उत्पन्न होने वाले निर्वाचित विवादों से सम्बन्धित विषय आते हैं विनियमन कर सकती है। इससे यह नहीं कहा जा सकता कि इस न्यायालय के समक्ष लम्बित किसी विषय का विनिश्चय करने की इसकी अधिकारिता छीन ली गई है। जो कुछ भी इसके द्वारा किया गया है वह इस बात का उपबन्ध करता है कि अनुच्छेद 71 (1) के अधीन आने वाली किसी विधि की मान्यता को किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा। चूंकि इस न्यायालय को ऐसे प्राधिकरण या अधिकरण के रूप में गठित किया गया है जिसके समक्ष राष्ट्रपति के निर्वाचन को प्रश्नगत किया जा सकता है इसलिए अनुच्छेद 71 (3) का प्रभाव केवल ऐसे सुप्रसिद्ध सामान्य सिद्धान्त को प्रभावशील करना है जिसे इस न्यायालय द्वारा लागू किया जाता है कि किसी अधिनियमिति के अधीन कार्य करने वाला या अपनी अधिकारिता का प्रयोग करने वाला कोई न्यायालय या अधिकरण उसी अधिनियमिति की विधिमान्यता को प्रश्नगत नहीं करेगा जो उसकी शक्तियों का स्त्रोत है। यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 71 (1) के अधीन संसद द्वारा बनाई गई विधि के अधीन गठित एक निर्वाचन अधिकरण के रूप में कार्य करता है। हमें न तो अधिनियम की धारा 5-ख और न ही धारा 5-ग तथा न ही उस संशोधन की, जिसके द्वारा संविधान का अनुच्छेद 71 (3) पुरः स्थापित किया गया था, विधिमान्यता पर किए गए आक्षेप में कोई बल दिखाई देता है।

12. ऊपर वर्णित उपबन्धों पर सावधानीपूर्वक हमने जो विचार किया है उसके परिणामस्वरूप हमारी यह राय है कि चूंकि राष्ट्रपतीय निर्वाचन को प्रश्नगत करने की प्रक्रिया अथवा रीति अधिकथित की जा चुकी है अतः अर्जीदार को उस प्रक्रिया के भीतर आ जाना चाहिए जिससे कि उसे राष्ट्रपतीय निर्वाचन पर आक्षेप करने का अधिकार मिल सके और इस अर्जी को कायम रखने के योग्य हो सके। यदि वह अपनी अर्जी में ही अपने द्वारा

किए गए प्राख्यानों के आधार पर न तो अभ्यर्थी है न ही होने का दावा कर सकता है, तो उसे भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डि के निर्वाचन को प्रश्नगत करने का अधिकार नहीं होगा। इस न्यायालय के आदेश 39 के नियम 2 और 5 के साथ पठित अधिनियम की धारा 14 (1), 14 (2) और 14 (3) और 14-क (1) के उपबन्ध का प्रभाव यह है कि अर्जी वर्जित है क्योंकि अर्जीदार के पास उसे कायम रखने के लिए अपेक्षित सुने जाने का अधिकार नहीं है।

13. पूर्वगामी कारणों से हम विवाद्यक (1) से (4) का विनिश्चय अर्जीदार के विरुद्ध करते हैं।

14. हम यहां यह उल्लेख कर दें कि **राजस्थान राज्य** बनाम **भारत संघ**[1] में इस न्यायालय ने प्रारम्भिक प्रश्न पर विवाद्यक विरचित किए बिना संविधान के अनुच्छेद 131 के अधीन इस न्यायालय में फाइल किए गए वाद खारिज कर दिए थे। उस मामले में यह संकेत किया गया था कि उन मामलों में तकनीकी रूप से अधिक उचित आदेश पारित करने का मतलब इस न्यायालय के नियमों के आदेश 23, नियम 6 के अधीन आरम्भ में ही वादपत्रों को नामंजूर करना होगा।

15. लेकिन इस मामले में यह बिल्कुल स्पष्ट है कि अर्जी अधिनियम की धारा 5-ख तथा धारा 14-क और अधिनियम की धारा 14 (3) में वर्णित भाग 3 के अधीन विरचित इस न्यायालय के नियमों के आदेश 39 नियम 2 और 5 के साथ पठित धारा 14 (1) और (3) के उपबन्धों द्वारा वर्णित है।

16. हम **चरण लाल साहू** बनाम **फखरुद्दीन अली अहमद** में 1974 की निर्वाचन अर्जी संख्या 1 में 14 अक्तूबर, 1974 को दिए गए इस न्यायालय के सांविधानिक न्यायपीठ के निर्णय से पूर्णतया और श्रद्धापूर्वक सहमत है उस मामले में इन्हीं अर्जीदारों द्वारा जो अब हमारे समक्ष हैं भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद के विरुद्ध संक्षेप में इसी प्रकार की निर्वाचन अर्जी पर इस न्यायालय ने उसकी अर्जी को खारिज कर दिया था और उन आधारों को नामंजूर कर दिया था जो अब हमारे समक्ष दोहराए गए हैं। उस मामले में भी अर्जीदार ने अधिनियम की धारा 5-ख और 5-ग की विधिमान्यता पर आक्षेप किया था

---

[1] (1978) 1 एस० सी० आर० 1=[1977] 4 उम० नि० प० 1107.

और वह असफल रहा था। अर्जी प्रारम्भिक आक्षेप पर आरंभ में ही खारिज कर दी गई थी।

17. **नजीर अहमद** बनाम **एम्परर**[1] में अधिकथित सुप्रसिद्ध सिद्धान्त का अवलम्ब लेते हुए यह बलपूर्वक कहा जा सकता है कि जहां किसी बात को करने का कोई ढंग अधिकथित कर दिया गया हो वहां कोई दूसरा ढंग अपरिहार्य रूप से प्रतिषिद्ध होता है, यह अर्जी निर्वाचन अर्जी के फाइल किए जाने के लिए प्रक्रिया अधिकथित करने वाले और यह उपदर्शित करने वाले कि उसे करने के लिए कौन हकदार है, विधि के उपबन्धों द्वारा वर्जित है। इस दृष्टि से अर्जी को इस न्यायालय के नियमों के आदेश 23, नियम 6 के अधीन नामंजूर किया जा सकता था। दूसरी ओर, यह कहा जा सकता है कि जब कि वह उन उपबंधों की, जो उसे न्यायालय में आने से वर्जित करते हैं विधिमान्यता को ही चुनौती दे रहा है, उसे तब तक सुने जाने का अधिकार है जब तक कि उसका मामला विधिमान्यता के प्रश्न पर रद्द नहीं कर दिया जाता। परिणामतः हमारा यह विचार है कि हमारे समक्ष जो मामला है उसमें हमारे लिए यह अभिनिर्धारित करना अधिक सुरक्षित है कि हमने जो मत अपनाया है उसके अनुसार यह अर्जी कायम रखने योग्य नहीं है।

18. तदनुसार हम यह अर्जी खारिज करते हैं किन्तु खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं देते हैं।

निर्वाचन अर्जी खारिज की गई।

ता०/दे०

---

[1] ए० आई० आर० 1936 पी० सी० 252(2).